पूज्य लालचंदभाई का प्रवचन
शिकोहाबाद, ता. १३-४-१९८९
श्री समयसार, गाथा १८१-१८३, प्रवच नंबर P १९

समयसार का संवर नाम का अधिकार, यानि धर्म का अधिकार है। यानि धर्म की उत्पत्ति कैसे हो, ये अधिकार है। अनंतानंत काल से आत्मा अज्ञानमय भाव से रागादि का कर्ता मानता है। अभी रागादि के साथ कर्ता-कर्म सम्बन्ध छूटने के बाद, आत्मा ज्ञान का कर्ता होता है, आत्मज्ञान का कर्ता, शास्त्रज्ञान नहीं। ऐसे भेदज्ञान से संवर की प्राप्ति होती है। यानि भेदज्ञान से शुद्धात्मा की अनुभूति होती है, शुद्धात्मा का अनुभव उसका नाम ही संवर है, उसका नाम ही धर्म है, उसका नाम ही मोक्ष का मार्ग है, उसका नाम ही सुख का मार्ग है।

तो उसका मथाला है। यहाँ संवर अधिकार की शुरुआत में भगवान कुंदकुंद आचार्य सकल कर्म का, संवर करवाने का, उत्कृष्ट उपाय जो भेदज्ञान उसकी प्रशंसा करते हैं। शुद्धात्मा के सन्मुख होकर अनुभव करने पर भावकर्म, द्रव्यकर्म और नोकर्म अटक जाता है। अटक जाता है-भावकर्म की उत्पत्ति नहीं होती है, नया कर्म बंधता नहीं है और पुराने कर्म की निर्जरा चालू हो जाती है। एक कार्य में कितना कार्य होता है! भेदज्ञान का अर्थ क्या है कि मेरा शुद्धात्मा जो है, वो वर्तमान पुण्य-पाप के परिणाम से भिन्न है, रागादि से भिन्न है। ऐसा राग का लक्ष छोड़कर शुद्धात्मा का अनुभव होता है, तो जो स्वानुभव दशा प्रगट हुई, नई, वो स्वानुभव दशा प्रगट हुई, नई, तो मिथ्यात्व नाम का भाव आस्रव रुक गया, यानि उत्पन्न हुआ नहीं। और पुराने (जूने) कर्म की निर्जरा होती है और नया कर्म बंधना रुक गया। भाव आस्रव रुक गया, भावकर्म, तो उसके निमित्त से नया कर्म बंधता था वो रुक गया। और नया कर्म बंधना रुक गया तो देह आदि मिलना भी रुक गया, रुक गया, छूट गया, मिलेगा ही नहीं। शरीर मिलेगा नहीं और इधर, इधर से, वो तो बाहर से बात की।

इधर क्या हुआ? कि शुद्धात्मा के अनुभव से उसको पुराना कर्म की निर्जरा हो जाती है, और नया कर्म बंधता नहीं है। कार्य एक है, उसके कारण दो होता है - नया कर्म का बंध रुक गया और पुराना कर्म की निर्जरा हो रही है। परिणाम एक, अनुभूति का परिणाम एक है, शुद्धात्मा की अनुभूति हुई, अपना शुद्धात्मा का ज्ञान, शुद्धात्मा का श्रद्धान, शुद्धात्मा का आचरण। ऐसे जो निर्विकारी, वीतरागी परिणाम प्रगट हुआ, उसने दो काम किया, उसने (जीव ने) नहीं किया, उसमें (परिणाम में) वो (वीतराग भाव प्रगट) हुआ, तो ऐसा हो गया। ये हुआ तो ऐसा हो गया।

जब सम्यग्दर्शन हुआ तो मिथ्यात्व की उत्पत्ति हुई नहीं। और मिथ्यात्व का, भावकर्म का संबंध से द्रव्यकर्म बंधना बंधन रुक गया, नया कर्म बंधना रुक गया, कर्म नहीं है, तो शरीर भी मिलेगा नहीं। तीन बात का ये संवर हो गया, यानि रुक गया। और इधर पुराने (जूने) कर्म की क्या स्थिति हुई कि कर्म की निर्जरा हो गई। आहाहा। कर्म की निर्जरा और अशुद्धि की हानि और शुद्धि की प्राप्ति और बाद में शुद्धि की वृद्धि। ऐसी प्रक्रिया सहज शुद्धात्मा के अनुभव से होती है अहाहा!

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

ऐसा सकल कर्मका संवर, ऐसा लिखा है ना? सकल यानि सर्व प्रकार का भावकर्म, द्रव्यकर्म और नोकर्म का संवर यानि रुक जाना। संवर यानि रुक जाना। जैसे जहाज में छिद्र पड़ा है ना, छिद्र, तो पानी आता है अंदर (जहाज) में भरता है, तो छिद्र बंद होता है, पानी आना रुक गया। ऐसे अपने शुद्धात्मा को भूलकर देहादि, रागादि मेरा है ऐसी मिथ्या मान्यता करते थे, तो भावकर्म मिथ्यात्व उत्पन्न होता था, उस भावकर्म के निमित्त से ज्ञानवर्ण आदि आठ प्रकार के कर्म का बंध होता है संयोगरूप, और कर्म के संबंध से देहादि की परंपरा चलती है, नोकर्म। वो सब रुक गया, सारा संसार खेल ख़तम हो गया। एक शुद्धात्मा के अनुभव से सारा संसार मिट गया। अहाहा! ऐसी अलौकिक (क्रिया) है। एक ही क्रिया है, शुद्धात्मा का अनुभव, ये धर्म की क्रिया है। कषाय की मंदता, वो धर्म की क्रिया नहीं है, अधर्म की क्रिया है। इससे वर्तमान आत्मा दुखी होता है और इससे नया कर्म बंध होता है, इससे शरीर आदि की प्राप्ति होती है। सारा संसार (उत्पन्न हो जाता है)। आहाहा।

मुमुक्षुः- संयोग में भी नहीं रहा? भावकर्म, द्रव्यकर्म, संयोग में भी नहीं रहा?

उत्तरः- हाँ! संयोग में कहाँ रहा। जब भावकर्म की उत्पत्ति रुक गयी, तो उसका जो निमित्त बनता था कर्म का, उस निमित्त का अभाव है तो नैमित्तिक का भी अभाव है। निमित्त है भावकर्म, नैमित्तिक है द्रव्य कर्म, नया। निमित्त के अभाव से नैमित्तिक भाव का भी अभाव है। नैमित्तिक भाव के अभाव से नोकर्म का अभाव हो जाता है। ऐसी परंपरा चालू हो जाती है। एक शुद्धात्मा का अनुभव आत्मा ने अनंतकाल से नहीं किया, बाकी सब कुछ किया। अहाहा! मुनि दीक्षा भी अनंतबार लिया और ग्रैविक स्वर्ग का जाकर दुःख भी भोग लिया। अहाहा! मगर आत्मिक सुख तो एक समय भी नहीं आया।

ये संवर का उत्कृष्ट उपाय भेदविज्ञान है। भेदविज्ञान का दो प्रकार है, सविकल्प और निर्विकल्प। सविकल्प भेदज्ञान का, भेदज्ञान होता है उसका नाम है, व्यवहार। और निर्विकल्प भेदज्ञान का नाम है, निश्चय अहाहा! शुभभाव करना वह व्यवहार नहीं है, शुभभाव करने का नाम व्यवहार नहीं है। वो तो अज्ञान है भैया! अहाहा! होता है उसको जानना वो भी व्यवहार है। सचमुच तो आत्मा को जानना वो निश्चय है। अहाहा! सकल कर्म का संवर का उत्कृष्ट उपाय भेदविज्ञान यानि कि आत्मा का अनुभव, भेदज्ञान का अनुभव, भेदज्ञान करके आत्मा का (अनुभव)। राग से भिन्न पाड़कर आत्मा को अकेला ज्ञान का वेदन। राग मिश्रित ज्ञान का वेदन अज्ञान है। राग मिश्रित ज्ञान का वेदन अज्ञान है। जैसे दूध में जहर डालकर पीना, आहाहा। तो मरण होता है। ऐसे राग मिश्रित होकर ज्ञान का स्वाद लेना, वो अज्ञान है। राग से जुदा पाड़कर अकेला ज्ञान का स्वाद लेना उससे आनंद आता है। आनंदानुभूति, रागानुभुती अनंतानत काल से किया, रागानुभुती अनंत-अनंत काल से किया जीव ने, अज्ञान भाव में। मगर ज्ञानानुभूति, आनंदानुभूति एक समय भी किया नहीं है। आहाहा। ये ज्ञानानुभुती, आनंदानुभूति उसका नाम संवर यानि धर्म की शुरुआत होती है।

इसका उपाय क्या है? उपाय बताते है। जो उपाय जानते नहीं है, उसको बताते हैं। और जिसने उपाय जान लिया, वो बताते है। जिसने उपाय जान लिया वो बताते है और जिसको उपाय जानने में नहीं आया, उसको बताते है। अहाहा! ऐसा है। ऐसी परम्पराएँ भारत में चालू है, चलती है अनादि काल से। तीर्थंकर होते हैं और बाद में भी ज्ञानी होता है। कहते जाते हैं और चलते जाते हैं। कहते जाते हैं और

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

मोक्ष में चले जाते हैं। यहाँ रुकते नहीं। अहाहा! गाथा १८१, १८२, १८३ –

उपयोग में उपयोग, को उपयोग नहिं क्रोधादिमें।
है क्रोध क्रोधविषै हि निश्चय, क्रोध नहिं उपयोगमें।। १८१।।
उपयोग है नहिं अष्टविध, कर्मों अरू नोकर्ममें।
ये कर्म अरु नोकर्म भी कुछ हैं नहीं उपयोगमें।। १८२।।
ऐसा अविपरीत ज्ञान जब ही प्रगटता है जीवके।
तब अन्य नहिं कुछ भाव वह उपयोग शुद्धात्मा करे।।१८३।।

उसकी टीका:- **वास्तव में एक वस्तु की दूसरी वस्तु नहीं है**। महा सिद्धांत। एक वस्तु की दूसरी वस्तु नहीं है। जैसे ये दायें हाथ का बायाँ हाथ नहीं है। बायें हाथ का दायां हाथ नहीं दो वस्तु अलग अलग हैं। ऐसे ये दो अंगुली हैं, तो एक अंगुली में दूसरी अंगुली का अभाव है। एक में दूसरे की नास्ति, तो एक की अस्ति सिद्ध होती है। एक में दूसरे का अभाव। इस अंगुली में इस अंगुली का अभाव। उसमें इसका का अभाव तो सिद्धि क्या हुई? दो की सिद्धि हुई की एक की? एक की हो गई। समझे? स्वरुप से सत्ता और पररूप से असत्ता। दो भाव के द्वारा एक पदार्थ की सिद्धि होती है। इसका **वास्तव में एक वस्तु की दूसरी वस्तु** नहीं, **नहीं है**। एक वस्तु की दूसरी वस्तु नहीं है। **अर्थात् एक वस्तु का दूसरी वस्तुके साथ कोई भी संबंध नहीं रखती**। कारण कि एक वस्तु, दूसरी वस्तु नहीं है। जैसे एक ये पेज है, एक पेज, एक पेज ये पेज का नहीं है क्योंकी ये पेज में ये पेज का अभाव है, तो एक के अन्दर दूसरे का अभाव, इसके द्वारा एक की सिद्धि होती है। इसका अस्तित्व सिद्ध करने में भी, उसमें इसकी नास्ति ऐसी अस्ति है, तो निशंक हो जाता है। समजे?

ऐसा क्योंकि, **क्योंकि दोनों के प्रदेश भिन्न हैं**। प्रदेश क्षेत्र भिन्न हैं। इसका क्षेत्र भिन्न है और इसका क्षेत्र भिन्न है। और इसका क्षेत्र (पेज का) और (दूसरे पेज का) क्षेत्र भिन्न है। एक क्षेत्र नहीं है। एक क्षेत्र यानि एक जगह पर दो पन्ने नहीं है। अपनी जगह पर ये पन्ना है और अपनी जगह पर ये पन्ना है। जगह अलग अलग है। इंजीनियर साहब! वो जगह रहने का स्थान अलग-अलग है। ये पत्ता इसमें रहता है, ये पत्ता इसमें रहता है। तो स्थान ही अलग-अलग है, क्षेत्र अलग-अलग है, दोनों का।

ऐसा यह भगवान आत्मा ज्ञानमयी आत्मा और रागादि दोनों का क्षेत्र भिन्न-भिन्न है। एक साथ रहने पर भी, आकाश का एक प्रदेश में रहने पर भी, ओहोहो! दो भाव अलग-अलग हैं। आत्मा में दुःख नहीं है और दुःख में आत्मा नहीं है। अहाहा! आत्मा में दुःख है और दुःख में आत्मा है ऐसा वस्तु का स्वभाव नहीं है। अहाहा! लोटा में जल है और जल में लोटा है ऐसा है नहीं। जल-जल में है लोटा-लोटा में है। शक्कर-शक्कर में है और उसका मैल-मैल में है, मैल में शक्कर नहीं और शक्कर में मैल नहीं। अहाहा! कपड़ा-कपड़ा में है, कपड़ा मेल में नहीं, मेल में कपड़ा नहीं है।

ऐसे एक वस्तु की दूसरी वस्तु नहीं है। क्षेत्र भेद है, प्रदेश भेद है। अपने-अपने क्षेत्र में रहते हैं, सब। दोनों के प्रदेश भिन्न होने से, इतनी जुदाई अहाहा! प्रदेश भेद करने से बराबर जुदा ख्याल में आता है। जो प्रदेश भेद नहीं लिखा हो तो, भाव भेदसे तो भेद है, मगर प्रदेश एक है ऐसी भ्रान्ति हो जाती है। ख्याल में आया? भाव भेद से भेद है भले चेतन और राग अलग भाव भेद से भेद है। मगर क्षेत्र तो एक है

ना एक सत्ता है ना? तो कहें नहीं। दो सत्ता न्यारी-न्यारी है। इसलिए प्रदेश भेद करने से अत्यंत जुदाई (भासित होती है)। ऐसा जुदापने का अनुभव होता है। लिखा है डॉक्टर साब। प्रदेश भेद है। क्षेत्र भेद। इसका (पन्ना) क्षेत्र और उसका (पन्ना) क्षेत्र अलग है और इसका (हाथ) क्षेत्र, उसका (पन्ना) क्षेत्र अलग है। हाथ का क्षेत्र ओर ये (पन्नाका) अलग-अलग है। ऐसे इसका क्षेत्र ये जितने क्षेत्र में अंगुली है, उस क्षेत्र में एक ही अंगुली है। ऐसे इसका क्षेत्र ये जितने क्षेत्र में अंगुली है, उस क्षेत्र में एक ही अंगुली है। इसका क्षेत्र ये है और इसका क्षेत्र ये, दो(नोका क्षेत्र एक) नहीं है। दो भिन्न-भिन्न है। अहाहा! ऐसे एक वस्तु की दूसरी वस्तु नहीं क्यूंकि प्रदेश भेद है। भाव भेद से भेद नहीं, लक्षण भेद से भेद नहीं। लक्षण भेद से भेद है, भाव भेद से भेद तो है, मगर प्रदेश भेद से भेद होने से अत्यंत भिन्नता है।आहाहा। मूल चीज़ है, यहाँ जो क्षेत्र भेद किया ना, यथार्थ किया है। क्षेत्र भेद से जुदाई होती है, भाव भेद और लक्षण भेद, वो तो वो लक्षण भेदसे भेद है, वस्तु तो एक होती है। भ्रान्ति रहती है। जैसे ज्ञान और आत्मा नाम भेद से भेद, लक्षण भेद से भेद, वस्तु तो एक ही है, ज्ञान और आत्मा एक है। उसका प्रदेश भेद नहीं है, उसका प्रदेश (भेद नहीं है)। जितने क्षेत्र में ज्ञान है उतने क्षेत्र में वो आत्मा भी है। जितने क्षेत्र में उपयोग है उतने क्षेत्र में आत्मा है, उसमें प्रदेश भेद नहीं है। मगर राग और आत्मा का प्रदेश भेद है।

मुमुक्षुः- क्षेत्र भेद है इसलिए लक्षण भेद है?

उत्तरः- क्षेत्र भेद है इसलिए दो पदार्थ सिद्ध हो गए। और दो पदार्थ सिद्ध हो गए इसलिए लक्षण भेद से भेद, नाम भेद से भेद, वस्तु भेद से भेद, प्रदेश भेद से भेद, सर्वथा जुदाई। सर्वथा जुदा। आहाहा। ऐसी चीज़ है।

मुमुक्षुः- अगर लक्षण भेद से ही भेद होता, राग में और आत्मा में, तो फिर ज्ञान में और रागमे क्या अंतर रहा?

उत्तरः- हाँ! ये राग है, आत्मा का लक्षण ही नहीं है। क्योंकि अभेद में लक्षण-लक्ष्य के भेद का प्रकार होता है। राग तो भिन्न है। राग भिन्न है, तो राग आत्मा का लक्षण होता नहीं हैं। अहाहा! ज्ञान तो लक्षण है, मगर राग आत्मा का लक्षण नहीं है।

मुमुक्षुः- नयी बात गयी।

उत्तरः- ज्ञान और आत्मा तो एक वस्तु है। तो लक्षण और लक्ष्य एक पदार्थ होता है, एक पदार्थ में लक्षण और लक्ष्य होता है। शक्कर और मिठास, शक्कर और मिठास एक पदार्थ है। तो लक्षण लक्ष्य का भेद (भले) करे, बाकी वस्तु तो एक है। ऐसे ज्ञान और आत्मा तो एक ही है। लक्षण भेद से भेद करने पर प्रदेश भेद नहीं होता है। मगर राग का लक्षण भी भिन्न और प्रदेश भी भिन्न है, इसलिए सर्वथा भिन्न है। अत्यंत भिन्न है, सर्वथा भिन्न है। कथंचित भिन्न-अभिन्न नहीं है राग। अहाहा! इसलिए आत्मा राग का करनेवाला नहीं है, इसलिए उपयोग में उपयोग है, उसको जानता है, राग को जानता नहीं है।

मुमुक्षुः- जिसमें जो है, उसी को तो जाना जाता है।

उत्तरः- हाँ! दूसरा कहाँ से जाना जाए? कहाँ से जाना जाए? जो है उसको जानता है। अहाहा! नहीं हो तो उसको नहीं जानता है। अहाहा! कर्ता भी नहीं है और ज्ञाता भी नहीं है। राग आत्मा में है ही नहीं, द्रव्य-गुण-पर्याय में नहीं है। द्रव्य में नहीं, गुण में नहीं और पर्याय में भी नहीं है। आहाहा। पर्याय में

हो तब तो कर्ता-कर्म सम्बन्ध बन जावे। पर्याय में भी नहीं इसलिए कर्ता-कर्म संबंध बनता नहीं है। और पर्याय जब द्रव्य को जानती है, तब द्रव्य में राग नहीं है, गुण में राग नहीं है और पर्याय में राग नहीं है। ज्ञान की पर्याय में राग नहीं है। आहाहा। राग जुदा और ज्ञान जुदा रहता है। दोनों के प्रदेश भिन्न होने से, भिन्न होने पर नहीं, भिन्न होने से। अनादि अनंत भिन्न हैं। क्रोध और राग एक प्रदेश, एक क्षेत्र नहीं है। भगवान की पूजा का जो शुभभाव आया आने उसको जाननहार जो ज्ञान है, जो ज्ञान में आत्मा जानने में आता है, उस ज्ञान से पूजा का राग भिन्न है। राग अत्यंत भिन्न है। राग जड़ और अचेतन है। पूजा का राग जड़ और अचेतन है, आहाहा। तो उसके साथ कर्ता-कर्म संबंध नहीं है और ज्ञाता-ज्ञेय का संबंध भी नहीं है। ऐसी चीज़ है। जब ज्ञान आत्मा के अभिमुख होता है, तो आत्मा जानने में आता है, राग जानने में नहीं आता, क्योंकि आत्मा में राग नहीं है। और आत्मा जानने में आवे, साथ में आनंद भी जानने में आता है, मगर राग तो जानने में आता नहीं है। आनंद जानने में आवे दुख जानने में आता नहीं है। दुख आतमामे नहीं है। जो जिस में नहीं है उसे वो जानने में आता नहीं है।

मुमुक्षुः- भावकर्म के साथ भाव इन्द्रिय भी ले सकते हैं?

उत्तरः- हाँ! ले सकते हैं। भाव इन्द्रिय भावकर्म एक ही जाति है।

मुमुक्षुः- भाव इन्द्रिय के प्रदेश भिन्न है?

उत्तरः- हाँ! प्रदेश भिन्न है। इन्द्रिय ज्ञान। प्रदेश भेद है। वो ज्ञेय है ज्ञान नहीं है। ज्ञान और आत्मा का प्रदेश भिन्न नहीं है, एक प्रदेश है।

मुमुक्षुः- भाव इन्द्रिय और भावकर्म के प्रदेश एक ही हैं?

उत्तरः- एक ही हैं। ये जुदा प्रदेश हैं, अपने से भिन्न प्रदेश में हैं। भावकर्म और भाव इन्द्रिय अपने प्रदेश से अलग हैं। अपने प्रदेश में क्या है? अपने प्रदेश में अतीन्द्रिय ज्ञानमयी आत्मा है, गुण भी हैं और उस गुण और गुणी को जानने वाला उपयोग भी अपना प्रदेश में है। उपयोग का प्रदेश भिन्न नहीं है, उपयोग का प्रदेश भिन्न नहीं है। मगर भाव इन्द्रिय और राग का प्रदेश भिन्न है। सर्वथा भिन्न है।

मुमुक्षुः- भाव इन्द्रिय और राग का प्रदेश एक है?

उत्तरः- एक प्रदेश में सब डाल दो पुद्गल का प्रदेश है। वो पुद्गल का क्षेत्र में, पुद्गल का क्षेत्र में भाव इन्द्रिय भी है, पुद्गल के क्षेत्र में भावकर्म भी है, पुद्गल के क्षेत्र में पाँच महाव्रत रहता है। पाँच महाव्रत कहाँ रहता है?

मुमुक्षुः- वहीं रहता है।

उत्तरः- पुद्गल के क्षेत्र में रहता है। हमेरे क्षेत्र में नहीं रहता। चेतन का क्षेत्र में जड़ का अत्यंताभाव है।

मुमुक्षुः- बराबर! ज्ञेय है ना?

उत्तरः- ज्ञेय है। ज्ञान कहाँ है (वो)? अहाहा! पर-ज्ञेय है। सब पुद्गल के क्षेत्र में डाल दो, उसमें समा जायेगा। उसमें समा जायेगा। भाव इन्द्रिय, द्रव्य इन्द्रिय, द्रव्यकर्म सब उसमें, पुद्गल में समा जायेंगा। पुद्गल का पेट बड़ा है। इधर आत्मा का पेट बड़ा है। उसमें कितना समाता है? अनंत गुण समाता है, अनंत गुण की निर्विकारी पर्यायें भी समाती हैं। ऐसा पेट बड़ा है आत्मा का।

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

मुमुक्षुः- आत्मा अपने क्षेत्र में बड़ा है, पुद्गल अपने क्षेत्र में बड़ा है।

उत्तरः- हाँ! बँटवारा है। ये बँटवारा स्व और पर का भेदज्ञान की कला चलती है।

मुमुक्षुः- स्वरुप से जुदाई है।

उत्तरः- स्वरुप से जुदाई है। **उनमें एक सत्ताकी अनुपपत्ति है**। अहाहा! राग और ज्ञान की सत्ता अलग-अलग है, एक सत्ता नहीं है। सत्ता दो क्यूँ है, भिन्न-भिन्न? कि प्रदेश भेद हैं। वो न्याय दिया। प्रदेश भिन्न (होने)से सत्ता न्यारी है। इसकी सत्ता और इसकी सत्ता न्यारी है। क्योंकि क्षेत्र भिन्न हैं। इतनी जुदाई है? पुण्य तत्व और आत्म तत्व में इतनी जुदाई है। आहाहा। पुण्य तत्व जड़ तत्व है, चेतन है नहीं। चेतन की भ्रान्ति हो गयी। अहाहा! उसमें ज्ञान है ही नहीं। पुण्य के परिणाम में ज्ञान है ही नहीं। ज्ञान नहीं है, तो आत्मा कहाँ से हो? ज्ञान नहीं है उसमें, पर्याय ज्ञानकी-ज्ञप्ति नहीं है, तो आत्मा कहाँ से आवे? आहाहा। उसको एक सत्ता की अनुत्पत्ति है। दो सत्ता भिन्न-भिन्न हैं। एक होने की भ्रान्ति हो गई, वो तो अज्ञान है, संसार है। ये दो (अंगुली) भिन्न-भिन्न हो, एक लगता है।

दो भाई साथ में चलते हैं, अच्छा! दो एक हो जाते हैं? साथ-साथ में दो भाई चले, तो भी दो दोरूप हैं, दो दोरूप हैं, एकरूप होता नहीं हैं। ये दायां हाथ है बायाँ हाथ है, एक नहीं होता है। एक होता है? दायां हाथ दायां हाथ है, बायाँ हाथ (बायाँ हाथ है)। आहा!हा! एक होता नहीं है। एक हो तो लूला हो जाये। एक ही हाथ हो जाये, दो हाथ बने नहीं। लूला समझे ना? मगर दो मिलकर एक कभी होता नहीं। ज्ञान और राग अनादी-अनंत जुदा ही हैं। जुदा ही रहते हैं और जुदा होता हुआ नाश हो जाता हैं। ज्ञान भिन्न और राग भिन्न। पट्टी काटा था ना वहाँ। आहाहा।

और इसप्रकार जब कि एक वस्तुकी दूसरी वस्तु नहीं होने से। अहाहा! एक वस्तु की दूसरी वस्तु, पूरी वस्तु जुदी। एक पर्याय थी दूसरी पर्याय जुदी ऐसा नहीं है, वस्तु जुदी। अच्छा! दया का परिणाम? जुदा है। होता है तो आत्मा में?

मुमुक्षुः- नहीं।

उत्तरः- नहीं। तो आत्मा में क्या होता है?

मुमुक्षुः- ज्ञान (होता है)।

उत्तरः- ज्ञान होता है। हाँ! वो ज्ञान दया का है कि आत्मा का?

मुमुक्षुः- आत्मा का।

उत्तरः- हाँ! ऐसा लेना। उसको एक सत्ता की अनुत्पत्ति है। **और इसप्रकार जब कि एक वस्तुकी दूसरी वस्तु नहीं है तब एकके साथ दूसरीको आधारआधेयसम्बन्ध भी है ही नहीं**। आहाहा। कितना न्यायपूर्ण दिया है। आधार-आधेय सम्बन्ध नहीं है। ये हाथ के आधार से चश्मे का डब्बा रहता नहीं है। क्योंकि एक वस्तु दूसरी वस्तु की नहीं है और प्रदेश भेद है। आधार-आधेय संबंध नहीं है, आधार-आधेय संबंध नहीं है, तो कर्ता-कर्म संबंध भी नहीं है। राग आत्मा के आधार से नहीं है, वस्तु जुदी है। आधार-आधेय नहीं है। इसलिए कर्ता-कर्म संबंध भी नहीं है। सचमुच ज्ञाता-ज्ञेय संबंध भी नहीं है। तो कर्ता-कर्म संबंध तो दूर रहा। आधार-आधेय संबंध नहीं है। आत्मा के आधार से दया नहीं होती है। दया का परिणाम का आधार आत्मा नहीं है। तो किसका आधार है? पुद्गल के आधार से होता है। मेरे आधार से नहीं होता

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

है। आहाहा। इतना भेदज्ञान की कला है। लोग तो शुभभाव से धर्म मानते हैं। शुभ करो, तो करते-करते, पुण्य करो, तो करते-करते धर्म होगा। आहाहा।

मुमुक्षुः- पुण्य भाव पुद्गल के आधार से तो होता है। लेकिन यहाँ तो कहते हैं कि पुद्गल में ही होता है।

उत्तरः- हाँ! पुद्गल में ही होता है, पुदगल ही है। आहाहा। क्षेत्र वो उसके क्षेत्र में है। मेरे क्षेत्र में नहीं है। उसमें क्या? अपने क्षेत्र में चन्दन का वृक्ष होता है, उसके बाजु में सब्जी का वृक्ष होता है, काँटा वाला, कोई भी। तो क्षेत्र भिन्न-भिन्न है। चन्दन (का वृक्ष और सब्जी) का वृक्ष है, क्षेत्र भिन्न-भिन्न है। ऐसे जिसमें चन्दन वृक्ष (अतममे) शीतल ज्ञान प्रगट होता है। और आकुलतामय राग वो भिन्न है, मेरे से भिन्न है। अत्यंत भिन्न है। वो मेरे में आता नहीं है। प्रवेश नहीं है अंदर में। क्षेत्र भिन्न है, प्रदेश भिन्न है। क्षेत्र भिन्न् है। प्रदेश भेद से बहुत जुदाई करते हैं। अतियांत। भाव भेद से भेद और लक्षण भेद से भेद। कोई अभी ऐसा कल्पना करता है, अज्ञानी जीव कल्पना करता है, कि भाव भेद से भेद कहो, मगर प्रदेश भेद से भेद मत कहो। ये एकत्वबुद्धि वाला बोलता है, अज्ञानी बोलता है। अज्ञानी का स्वर है ये, वो अज्ञानी की भाषा है। बचाव करता है, समझे? वो कहते अभी चलता है, समझे? (अभी) चलती है बात। मेरे सामने तो बहुत आता है। भाव भेद से भेद कहो, लक्षण भेद से भेद कहो, तो क्षेत्र तो एक है, बिलकुल क्षेत्र एक नहीं हैं।

मुमुक्षुः- डॉक्टर कहते हैं कि इसमें तो लिखी हैं जुदाई।

उत्तरः- इसमें तो लिखा हैं लेकिन मानना चाहिए ना, मानना चाहिए ना। इसमे लिखा है कि पुण्य से धर्म नहीं होता है? सब मानते हैं? कोई-कोई मानते हैं। कोई-कोई मान जाता है बाकी सब मानते नहीं हैं। जिसकी होनहार अच्छी मोक्ष होने के काल नज़दीक आ गया, वो मान लेता है। पुण्य से धर्म नहीं होता है। ज्ञान से धर्म होता है, आत्म ज्ञान से धर्म होता है, शास्त्र ज्ञान से नहीं। आत्म ज्ञान से ही। आत्मा का अनुभव से, ज्ञान यानि अनुभव। जो ज्ञान में आनंद का स्वाद आवे, उसका नाम ज्ञान है। आहाहा। ज्ञान का लक्षण जानना तो है, मगर अनुभूति लक्षण आनंद है, उसका। अहाहा! अतीन्द्रिय आनंद आता है, ज्ञान के अंदर। उसका नाम ज्ञान है बाकि अज्ञान है। कोरा अज्ञान।

एक वस्तुकी दूसरी वस्तु नहीं होने से आधार-आधेय संबंध नहीं हैं। आहाहा। अद्धर से होता हैं राग? आत्मा के आधार के बिना? दीवार में होना चाहिए? अरे! दीवार जैसा भिन्न हैं, भले दीवार तो नोकर्म पदार्थ हैं, उसमे राग नहीं है। मगर इधर राग उत्पन्न होता है तो जैसे दीवार भिन्न है, ऐसे राग भिन्न है। ज्ञान से आत्मा अभिन्न है और राग से भिन्न है। आहाहा। **इसलिये (प्रत्येकवस्तुका) अपने स्वरूपमें प्रतिष्ठारूप (दृढ़तापूर्वक रहनेरूप) ही आधारआधेयसम्बन्ध है।** आहाहा अपनी वस्तु अपने स्वरुप में रहती हैं। जो आत्मा है वो अपनी ज्ञान स्वरुप में प्रतिष्ठित रहती है। मगर आत्मा राग में जाता नहीं है और राग इधर आता नहीं है। आहाहा। अलग-अलग वस्तु है। साथ-साथ में रहने पर जुदाई रहती है। साथ-साथ में, संयोग और स्वभाव साथ साथ में रहते हैं। देह और आत्मा साथ में रहते हैं, संयोग। मगर उसके अंदर जुदाई हैं कि एक हो गया?

मुमुक्षुः- जुदाई है।

ऐसे राग का संयोग और ज्ञान का स्वभाव, साथ-साथ में रहने पर राग भिन्न है और ज्ञान भिन्न है।

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

राग में ज्ञान आता नहीं है और ज्ञान में राग आता नहीं है। एक वस्तुकी दूसरी वस्तु बिलकुल नहीं है।

इसलिए ज्ञान, चमत्कारिक पदार्थ है। भाग्यशाली डॉक्टर साहब! भाग्यशाली है। दो वर्ष से मुझसे बात की थी संध्या ने कि दो वर्ष से उसका भेटा हुआ| दो तीन वर्ष से. समझे? आहाहा| भाग्यशाली| लोटरी लग गयी समझो। ऐसी चीज़ है। आहाहा| बैठती नहीं है प्रदेश भेद (की बात), 45 वर्ष के अभ्यासी को। इसमें लिखा है तो उसके आधार से तो हाँ बोलना चाहिए कि नहीं। देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा है कि नहीं तुझे ?देख! समयसार पढ़ ले। तेरे को नहीं बैठे तो अलग बात लेकिन इसमें लिखा है तो हाँ तो बोल। कि नहीं प्रदेश भेद नहीं है। यानि कि उसका (शास्त्र का) नकार करता है। उसका नकार करता है, शास्त्र का। अहाहा! शास्त्र का नकार नहीं करता है, आत्मा का नकार करता है। आत्मा का। अहाहा! शास्त्र तो शास्त्र है। अहाहा! यानि कि व्यवहार श्रद्धा से भ्रष्ट है। निश्चय श्रद्धा तो भ्रष्ट है ही। मगर व्यवहार श्रद्धा से भी भ्रष्ट है। शास्त्र में लिखा हो तो अपने को नरम बन जाना चाहिए। ये जिनवाणी है। मैं विचार करूँगा, बिठाऊंगा। तो क्षम्य है। समझे? मगर ये है झूठा है ऐसा नहीं बोलना चाहिये| आहाहा|

इसलिये (प्रत्येकवस्तुका) अपने स्वरूपमें प्रतिष्ठारूप (दृढ़तापूर्वक रहनेरूप) ही आधारआधेयसम्बन्ध है। इसलिए ज्ञान जो कि, ज्ञान यानि आत्मा, ज्ञान जो कि, आत्मा जो कि, शुद्धात्मा जो कि, ज्ञायक भाव जो कि, ज्ञायक भाव **जो कि जाननक्रियारूप अपने स्वरूपमें प्रतिष्ठित है**। आहाहा| ये ज्ञायक भाव कहाँ रहता है? कि जानन क्रिया में रहता है। अहाहा! विराजमान है। वो प्रतिष्ठित है। अपने ज्ञान में ज्ञायक रहता है। ज्ञान से बाहर ज्ञायक जाता नहीं है। क्यों? कि ज्ञान में ज्ञायक रहता है इसका अर्थ क्या? कि ज्ञान में ही ज्ञायक जानने में आता है तो ज्ञायक ज्ञान में रहता है। (ज्ञायक) राग में जानने में आता नहीं है तो राग में रहता नहीं है। जानन क्रिया में आत्मा है क्योंकि जानन क्रिया में जाननहार जानने में आता है। जानन क्रिया में जाननहार ज्ञायक भाव जानने में आता है। आता है, तो जो भाव में ज्ञायक भाव जानने में आता है, उस भाव में ही ज्ञायक भाव है। जो भाव में, राग में, आत्मा जानने में आता नहीं है, तो उस भाव में ज्ञायक भाव है नहीं। जानन क्रिया में ही आत्मा विराजमान है।

शक्कर की मिठास में शक्कर है। बर्तन में शक्कर नहीं है। और शक्कर के मैल में भी शक्कर नहीं है। मैल मैल में है और शक्कर में शक्कर है। और शक्कर का भेद करो तो शक्कर कहाँ है? कि मिठास में है। वो भेद का कथन है। अभेद में तो शक्कर में शक्कर है। मगर भेद कर के समजाते हैं, तो वो शक्कर नाम का जो द्रव्य पदार्थ है, वो कहाँ है? कि शक्कर की मिठास अवस्था, पर्याय में शक्कर द्रव्य रहता है। मगर मैल में रहता नहीं है। बाकी तो शक्कर शक्कर में है। शक्कर, शक्कर की मिठास पर्याय में है। वो भी भेद का कथन हो जाता है। तो अभी अभेद कहेंगे। मार्मिक है।

ज्ञान जो कि, ज्ञान यानि आत्मा, शुद्धात्मा, ज्ञायक भाव **जो कि जाननक्रियारूप अपने स्वरूपमें प्रतिष्ठित है**। रहता है। भगवान आत्मा तो आत्मा के ज्ञान में रहता है। भगवान् आत्मा शास्त्र ज्ञान में रहता नहीं है। भगवान आत्मा पूजा के विकल्प में रहता नहीं है। यात्रा के विकल्प में रहता नहीं है। उपवास के शुभ भाव में भगवान् आत्मा विराजमान है नहीं। इसलिए वह धर्मका धर्मी भी नहीं है और धर्म भी नहीं है। वो तो प्रदेश भेद है भैया! आहाहा| सामायिक का राग आया, तो राग में आत्मा है? आहाहा| राग में आत्मा आता नहीं है। कि प्रदेश भेद है। सामायिक का राग और आत्मा अलग वस्तु है। इसलिए

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

सामायिक के राग का करनेवाला आत्मा नहीं है। उसको जाननेवाला भी नहीं है। जाननेवाले को जनता है। आहाँहाँ! जिसमें आत्मा रहता है वो धर्म है| और जो आत्मा रहेता है वो धर्मी है। धर्मी धर्म में रहता है, धर्मी कर्म में रहता नहीं है। धर्मी धर्म में रहता है, कर्म में रहता नहीं है। दया दान में भगवान् आत्मा रहता नहीं है। क्योंकि वो कर्म है। आहाहा| आत्मा का धर्म नहीं है। धर्मी धर्म में रहता है, वो भी भेद का कथन समजाया जाता है। समजाने के लिए भेद है बाकी तो धर्मी धर्मी में रहता है। बाद में बस, मौन हो जाओ। बस। आखिर की वह बात है|

मुमुक्षुः- आज पराकाष्ठा की बात चलती है। इस तरफ अभेद की पराकाष्ठा और उस तरफ भेद की पराकाष्ठा।

उत्तरः- भेद की पराकाष्ठा। **इसलिए ज्ञान कि जो** ज्ञायक कि जो **जाननक्रियारूप अपने स्वरूपमें प्रतिष्ठित है**, रहता है, **वह**, **जाननक्रियाका**, अभी अभेद करते हैं। वो जो जानन क्रिया है आत्मा की जानन क्रिया। वो **ज्ञानसे** यानि आत्मासे **अभिन्नत्व होनेसे**, **ज्ञानमें ही है**। ज्ञान ज्ञानमें ही है, पहले ज्ञान जाननक्रिया में, ज्ञान यानि आत्मा जाननक्रिया में, अभी अभेद होने से ज्ञान ज्ञान में आ गया। आत्मा आत्मा में है। आत्मा जननक्रिया में भी नहीं है। राग में तो नहीं है। क्या कहा? भगवान आत्मा राग की क्रिया में तो नहीं है, मगर भेद को समजाने के लिए राग में नहीं है, राग की क्रिया में नहीं है, कर्म में ज्ञायक नहीं है, तो धर्म में, जानन क्रिया जो धर्म है, पर्याय है उसमें द्रव्य है। बाद में तो, आहाहा| उसमें भी नहीं है। वो तो आत्मा आत्मा में है। आत्मा आत्मा में है। आहाहा| तो वहाँ अनुभव होता है। वहाँ अनुभव होता है।

उधर अनुमान होता है। कि राग में नहीं है, जाननक्रिया में आत्मा है। वहाँ अनुमान, अनुभव नहीं है। और बाद में अभेद कर के लिखा, कि ज्ञान ज्ञान में है। पहले ज्ञान ज्ञप्तिक्रिया में था, अभी आगे बढ़ो। आगे बढ़ो कि मैं इसमें हूँ? नहीं। मैं तो मेरे में हूँ। ज्ञान की पर्याय अभेद हो जाती है| ज्ञान की पर्याय अभेद होकर अनुभव होता है|

अभेद में भेद दिखाई नहीं देता है। राग में नहीं है ये समझाने के लिए ज्ञान उपयोग में उपयोग है, जाननक्रिया में भगवान् आत्मा है, ऐसा समझाया। मगर वो तो अनित्य है, अनित्य में नित्य (रहता) है ऐसा कहना वो व्यवहार हो गया। नित्य नित्य में है। अहाहा! तो अनित्य भी नित्य जैसा हो गया। अनित्य भी नित्य जैसा हो गया। नित्य हो गया नहीं, नित्य जैसा हो गया। हाँ! एक एक शब्द की कीमत है।

मुमुक्षुः- कल जो पंडित जी आये थे वो कहते थे कि ४० साल से मेरा अभ्यास चालू है। मेरे को ये अटक लगी हुई थी, जो भाई जी से आज मैंने प्रश्न किया वो मेरा सहज समाधान हो गया। आज प्रश्न छूटा है ४० साल के बाद। आपका तो साथ नहीं छोड़ना चाहिए साहब!

उत्तरः- मेरा साथ छोड़कर आप अपने साथ रहो।

मुमुक्षुः- तो वो आपका साथ है।

ॐ

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com